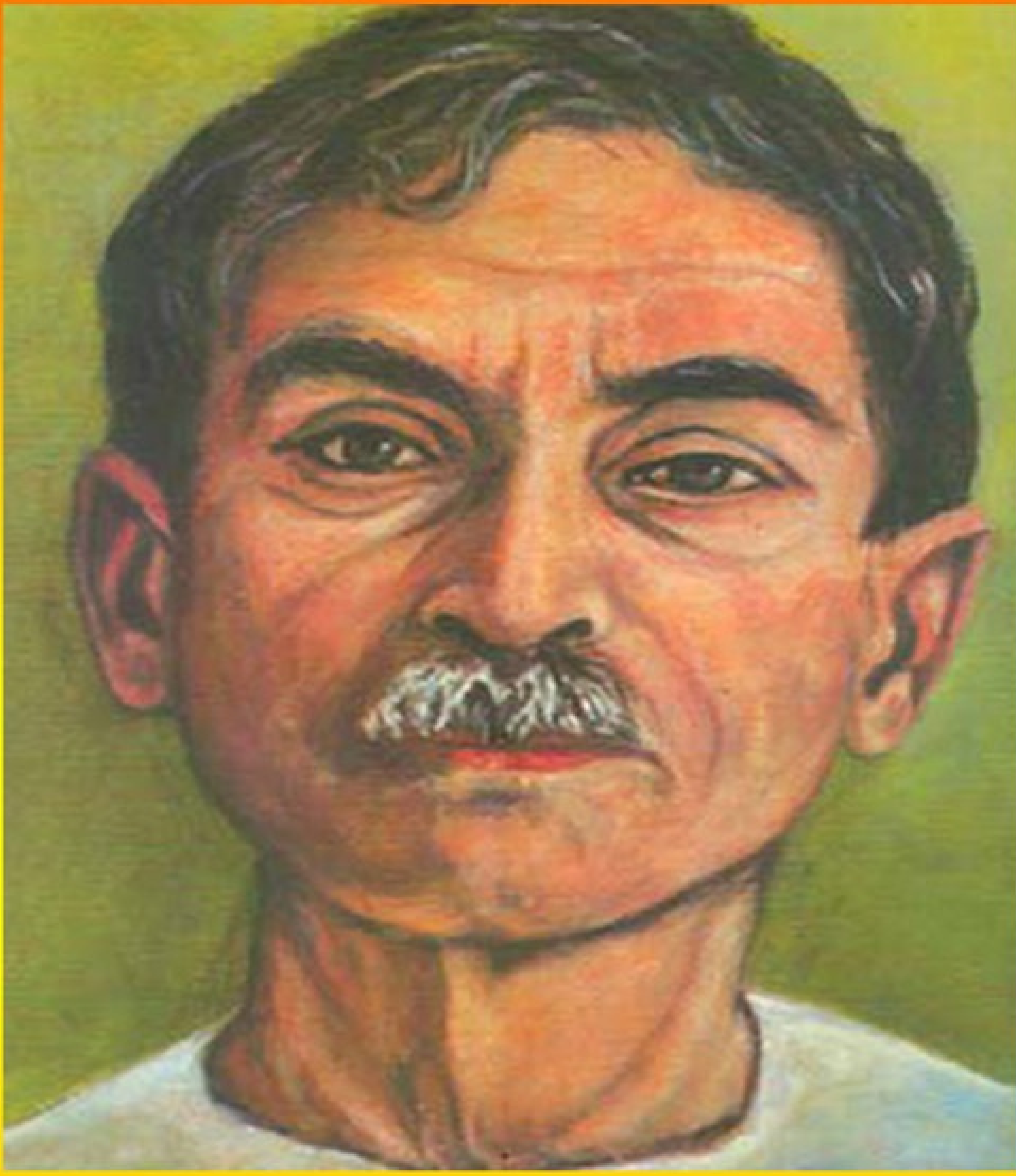


PREMCHAND

TWO SISTER

दो बहनें

प्रेमचन्द

साँई ईपब्लिकेशंस

सर्वाधिकार सुरक्षित। यह पुस्तक या इसका कोई भी भाग लेखक या प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इलैक्ट्रॉनिक या यान्त्रिक (जिसमे फोटोकॉपी रिकार्डिंग भी सम्मिलित है) विधि से या सूचना संग्रह तथा पुनः प्राप्ति-पद्धति (रिट्रिवल) द्वारा किसी भी रूप में पुनः प्रकाशित अनूदित या संचारित नहीं किया जा सकता।

— प्रकाशक

दो बहनें

प्रेमचन्द

© साँई ईपब्लिकेशंस

प्रकाशक: साँई ईपब्लिकेशंस

All rights reserved. No part of this material may be reproduced or transmitted in any form, or by any means electronic or mechanical, including photocopy, recording, or by any information storage and retrieval system without the written permission of the publisher, except for inclusion of brief quotations in a review.

— Publisher

Two Sister

By Premchand

© Sai ePublications

Published by: Sai ePublications

Digital edition produced by Sai ePublications

अनुक्रमणिका

१

दोनों बहनें दो साल के बाद एक तीसरे नातेदार के घर मिलीं और खूब रो-धोकर खुश हुईं तो बड़ी बहन रूपकुमारी ने देखा कि छोटी बहन रामदुलारी सिर से पाँव तक गहनों से लदी हुई है, कुछ उसका रंग खुल गया है, स्वभाव में कुछ गरिमा आ गयी है और बातचीत करने में ज्यादा चतुर हो गयी है। कीमती बनारसी साड़ी और बेलदार उन्नावी मखमल के जम्पर ने उसके रूप को और भी चमका दिया-वही रामदुलारी, लडक़पन में सिर के बाल खोले, फूहड़-सी इधर-उधर खेला करती थी। अन्तिम बार रूपकुमारी ने उसे उसके विवाह में देखा था, दो साल पहले। तब भी उसकी शक्ल-सूरत में कुछ ज्यादा अन्तर न हुआ था। लम्बी तो हो गयी थी, मगर थी उतनी ही दुबली, उतनी ही फूहड़, उतनी ही मन्दबुद्धि। जरा-जरा सी बात पर रूठने वाली, मगर आज तो कुछ हालत ही और थी, जैसे कली खिल गयी हो और यह रूप इसने छिपा कहाँ रखा था? नहीं, आँखों को धोखा हो रहा है। यह रूप नहीं केवल आँखों को लुभाने की शक्ति है, रेशम और मखमल और सोने के बल पर वह रूपरेखा थोड़े ही बदल जाएगी। फिर भी आँखों में समाई जाती है। पच्चासों स्त्रियाँ जमा हैं, मगर यह आकर्षण, यह जादू और किसी में नहीं।

कहीं आईना मिलता तो वह जरा अपनी सूरत भी देखती। घर से चलते समय उसने आईना देखा था। अपने रूप को चमकाने के लिए जितना सान चढ़ा सकती थी, उससे कुछ अधिक ही चढ़ाया था। लेकिन अब वह सूरत जैसे स्मृति से मिट गयी है, उसकी धुँधली-सी परछाहीं भर हृदय-पट पर है। उसे फिर से देखने के लिए वह बेकरार हो रही है। वह अब तुलनात्मक दृष्टि से देखेगी, रामदुलारी में यह आकर्षण कहाँ से आया, इस रहस्य का पता लगाएगी। यों उसके पास मेकअप की सामग्रियों के साथ छोटा-सा आईना भी है, लेकिन भीड़-भाड़ में वह आईना देखने या बनाव-सिंगार की आदी नहीं है। ये औरतें दिल में न जाने क्या समझें। मगर यहाँ कोई आईना तो होगा ही। ड्राइंग-रूम में जरूर ही होगा। वह उठकर ड्राइंग-रूम में गयी और क़द्देआदम शीशे में अपनी सूरत देखी। वहाँ इस वक्त और कोई न था। मर्द बाहर सहन में थे, औरतें गाने-बजाने में लगी हुई थीं। उसने आलोचनात्मक दृष्टि से एक-एक अंग को, अंगों के एक-एक विन्यास को देखा। उसका अंग-विन्यास, उसकी मुखछवि निष्कलंक है। मगर वह ताजगी, वह मादकता, वह माधुर्य नहीं है। हाँ, नहीं है। वह अपने को धोखे में नहीं डाल सकती। कारण क्या है? यही कि रामदुलारी आज खिली है, उसे खिले जमाना हो गया। लेकिन इस ख्याल से उसका चित्त शान्त नहीं होता। वह रामदुलारी से हेठी बनकर नहीं रह सकती। ये पुरुष भी कितने गावदी होते हैं। किसी में भी सच्चे सौन्दर्य की परख नहीं। इन्हें तो जवानी और चंचलता और हाव-भाव चाहिए। आँखें रखकर भी अन्धे बनते हैं। भला इन बातों का आपसे क्या सम्बन्ध! ये तो उम्र के तमाशे हैं। असली रूप तो वह है, जो समय की परवाह न करे। उसके कपड़ों में रामदुलारी को खड़ा कर दो, फिर देखो, यह सारा जादू कहाँ उड़ जाता है। चुड़ैल-सी नजर आये। मगर इन अन्धों को कौन समझाये। मगर रामदुलारी के घरवाले तो इतने सम्पन्न न थे। विवाह में जो जोड़े और गहने आये थे,

वे तो बहुत ही निराशाजनक थे। खुशहाली का दूसरा कोई सामान भी न था। इसके ससुर एक रियासत के मुख्तारआम थे, और दूल्हा कालेज में पढ़ता था। इस दो साल में कहाँ से यह हुन बरस गया। कौन जाने, गहने कहीं से माँग लायी हो। कपड़े भी माँगे हो सकते हैं। कुछ औरतों को अपनी हैसियत बढ़ाकर दिखाने की लत होती है। तो वह स्वाँग रामदुलारी को मुबारक रहे। मैं जैसी हूँ, वैसी अच्छी हूँ। प्रदर्शन का यह रोग कितना बढ़ता जाता है। घर में रोटियों का ठिकाना नहीं है, मर्द २५-३० रुपये पर क़लम घिस रहा है; लेकिन देवीजी घर से निकलेंगी तो इस तरह बन-ठनकर, मानों कहीं की राजकुमारी हैं। बिसातियों के और दरजियों के तकाजे सहेंगी, बजाज के सामने हाथ जोड़ेंगी, शौहर की घुड़कियाँ खाएँगी, रोएँगी, रूठेंगी, मगर प्रदर्शन के उन्माद को नहीं रोकतीं। घरवाले भी सोचते होंगे, कितनी छिछोरी तबियत है इसकी! मगर यहाँ तो देवीजी ने बेहयाई पर कमर बाँध ली है। कोई कितना ही हँसे, बेहया की बला दूर। उन्हें तो बस यही धुन सवार है कि जिधर से निकल जाएँ, उधर लोग हृदय पर हाथ रखकर रह जाएँ। रामदुलारी ने जरूर किसी से गहने और जेवर माँग लिये बेशर्म जो है!

उसके चेहरे पर आत्म-सम्मान की लाली दौड़ गयी। न सही उसके पास जेवर और कपड़े। उसे किसी के सामने लज्जित तो नहीं होना पड़ता! किसी से मुँह तो नहीं चुराना पड़ता। एक-एक लाख के तो उसके दो लड़के हैं। भगवान् उन्हें चिरायु करे, वह इसी में खुश है। खुद अच्छा पहन लेने और अच्छा खा लेने से जीवन का उद्देश्य नहीं पूरा हो जाता। उसके घरवाले गरीब हैं, पर उनकी इज्जत तो है, किसी का गला तो नहीं दबाते, किसी का शाप तो नहीं लेते!

इस तरह अपने मन को ढाढ़स देकर वह फिर बरामदे में आयी, तो रामदुलारी ने जैसे उसे दया की आँखों से देखकर कहा-जीजाजी की कुछ तरक्की-वरक्की हुई कि नहीं बहन! या अभी तक वही ७५ रुपये पर कलम घिस रहे हैं?

रूपकुमारी की देह में आग-सी लग गयी। ओफ्फोह रे दिमाग़! मानों इसका पति लाट ही तो है। अकडक़र बोली-तरक्की क्यों नहीं हुई। अब सौ के ग्रेड में हैं। आजकल यह भी गनीमत है, नहीं अच्छे-अच्छे एम०ए० पासों को देखती हूँ कि कोई टके को नहीं पूछता। तेरा शौहर तो अब बी०ए० में होगा?

रामदुलारी ने नाक सिकोडक़र कहा-उन्होंने तो पढऩा छोड़ दिया बहन, पढक़र औकात खराब करना था और क्या। एक कम्पनी के एजेण्ट हो गये हैं। अब ढाई सौ रुपये माहवार पाते हैं। कमीशन ऊपर से। पाँच रुपये रोज सफर-खर्च के भी मिलते हैं। यह समझ लो कि पाँच सौ का औसत पड़ जाता है। डेढ़ सौ माहवार तो उनका निज खर्च है बहन! ऊँचे ओहदे के लिए अच्छी हैसियत भी तो चाहिए। साढ़े तीन सौ बेदाग़ घर दे देते हैं। उसमें से सौ रुपये मुझे मिलते हैं, ढाई सौ में घर का खर्च खुशफैली से चल जाता है। एम०ए० पास करके क्या करते!

रूपकुमारी इस कथन को शेखचिल्ली की दास्तान से ज्यादा महत्व नहीं देना चाहती, मगर रामदुलारी के लहजे में इतनी विश्वासोत्पादकता है कि वह अपनी निम्न चेतना में उससे प्रभावित हो रही है और उसके मुख पर पराजय की खिन्नता साफ झलक रही है। मगर यदि उसे बिलकुल पागल नहीं हो जाना है तो इस ज्वाला को हृदय से निकाल देना पड़ेगा। जिरह करके अपने मन को विश्वास दिलाना पड़ेगा कि इसके काव्य में एक चौथाई से ज्यादा सत्य नहीं है। एक चौथाई तक वह सह सकती है। इससे ज्यादा उससे न सहा जाएगा। इसके साथ ही उसके दिल में धडक़न भी है कि कहीं यह कथा सत्य निकली तो वह रामदुलारी को कैसे मुँह दिखाएगी। उसे भय है कि कहीं उसकी आँखों से आँसू न निकल पड़ें। कहाँ पछत्तर और कहाँ पाँच सौ! इतनी बड़ी रकम आत्मा की हत्या करके भी क्यों न मिले, फिर भी रूपकुमारी के लिए असह्य है। आत्मा का मूल्य अधिक से अधिक सौ रुपये हो सकता है। पाँच सौ किसी हालत में भी नहीं।

उसने परिहास के भाव से पूछा-जब एजेण्टी में इतना वेतन और भत्ता मिलता है तो ये सारे कालेज बन्द क्यों नहीं हो जाते? हजारों लड़के क्यों अपनी जिन्दगी खराब करते हैं?

रामदुलारी बहन के खिसियानेपन का आनन्द उठाती हुई बोली-बहन, तुम यहाँ भूल कर रही हो। एम०ए० तो सभी पास हो सकते हैं, मगर एजेण्टी बिरले ही किसी को आती है। यह तो ईश्वर की देन है। कोई जिन्दगी-भर पढ़ता रहे, मगर यह जरूरी नहीं कि वह वह अच्छा एजेण्ट भी हो जाए। रुपये पैदा करना दूसरी बात है। आलिम-फ़ाज़िल हो जाना दूसरी बात। अपने माल की श्रेष्ठता का विश्वास पैदा कर देना, यह दिल में जमा देना कि इससे सस्ता और टिकाऊ माल बाजार में मिल ही नहीं सकता, आसान काम नहीं हैं एक-से-एक घाघों से उनका साबका पड़ता है। बड़े-बड़े राजाओं और रईसों का मत फेरना पड़ता है, तब जाके कहीं माल बिकता है। मामूली आदमी तो राजाओं और नवाबों के सामने ही न जा सके। पहुँच ही न हो। और किसी तरह पहुँच भी जाय तो जबान न खुले। पहले-पहले तो इन्हें भी झिझक हुई थी, मगर अब तो इस सागर के मगर हैं। अगले साल तरक्की होने वाली है।

रूपकुमारी की धमनियों में रक्त की गति जैसे बन्द हुई जा रही है। निर्दयी आकाश गिर क्यों नहीं पड़ता! पाषाण-हृदया धरती फट क्यों नहीं जाती! यह कहाँ का न्याय है कि रूपकुमारी जो रूपवती है, तमीज़दार है, सुघड़ है, पति पर जान देती है, बच्चों को प्राणों से ज्यादा चाहती है, थोड़े में गृहस्थी को इतने अच्छे ढंग से चलाती है, उसकी तो यह दुर्गति, और यह घमण्डिन, बदतमीज, विलासिनी, चंचल, मुँहफट छोकरी, जो अभी तक सिर खोले घूमा करती थी, रानी बन जाए? मगर उसे अब भी कुछ आशा बाकी थी। शायद आगे चलकर उसके चित्त की शान्ति का कोई मार्ग निकल आये।

उसी परिहास के स्वर में बोली-तब तो शायद एक हजार मिलने लगें?

'एक हजार तो नहीं, पर छ: सौ में सन्देह नहीं?'

‘कोई आँखों का अन्धा मालिक फँस गया होगा?’

व्यापारी आँखों के अन्धे नहीं होते दीदी! उनकी आँखें हमारी-तुम्हारी आँखों से कहीं तेज होती हैं। जब तुम उन्हें छः हजार कमाकर दो, तब कहीं छः सौ मिलें। जो सारी दुनिया को चराये उसे कौन बेवकूफ बनाएगा।’

परिहास से काम न चलते देखकर रूपकुमारी ने अपमान का अस्त्र निकाला-मैं तो इसे बहुत अच्छा पेशा नहीं समझती। सारे दिन झूठ के तूमार बाँधो। यह तो ठग-विद्या है!

रामदुलारी जोर से हँसी। बहन पर उसने पूरी विजय पायी थी।

‘इस तरह तो जितने वकील-बैरिस्टर हैं; सभी ठग-विद्या करते हैं। अपने मुवक्किल के फायदे के लिए उन्हें क्या नहीं करना पड़ता? झूठी शहादतें तक बनानी पड़ती हैं। मगर उन्हीं वकीलों और बैरिस्टरों को हम अपना लीडर कहते हैं, उन्हें अपनी कौमी सभाओं का प्रधान बनाते हैं, उनकी गाडिय़ाँ खींचते हैं, उन पर फूलों और अशर्फियों की वर्षा करते हैं, उनके नाम से सडक़ें, प्रतिमाएँ और संस्थाएँ बनाते हैं। आजकल दुनिया पैसा देखती है। आजकल ही क्यों? हमेशा से धन की यही महिमा रही है। पैसे कैसे आएँ, यह कोई नहीं देखता। जो पैसे वाला है, उसी की पूजा होती है। जो अभागे हैं, अयोग्य हैं, या भीरु हैं, वे आत्मा और सदाचार की दुहाई देकर अपने आँसू पोंछते हैं। नहीं, आत्मा और सदाचार को कौन पूछता है।’

रूपकुमारी खामोश हो गयी। अब उसे यह सत्य उसकी सारी वेदनाओं के साथ स्वीकार करना पड़ेगा कि रामदुलारी सबसे ज्यादा भाग्यवान है। इससे अब त्राण नहीं। परिहास या अनादर से वह अपनी तंगदिली का प्रमाण देने के सिवा और क्या पाएगी। उसे किसी बहाने से रामदुलारी के घर जाकर असलियत की छान-बीन करनी पड़ेगी। अगर रामदुलारी वास्तव में लक्ष्मी का वरदान पा गयी है तो रूपकुमारी अपनी किस्मत ठोंककर बैठ रहेगी। समझ लेगी कि दुनिया में कहीं न्याय नहीं है, कहीं ईमानदारी की पूछ नहीं है।

मगर क्या सचमुच उसे इस विचार से सन्तोष होगा? यहाँ कौन ईमानदार है? वही, जिसे बेईमानी करने का अवसर नहीं है और न इतनी बुद्धि या मनोबल है कि वह अवसर पैदा कर ले। उसके पति ७५ रुपये पाते हैं; पर क्या दस-बीस रुपये और ऊपर से मिल जाएँ तो वह खुश होकर ले न लेंगे? उनकी ईमानदारी और सत्यवादिता उसी समय तक है, जब तक अवसर नहीं मिलता। जिस दिन मौका मिला, सारी सत्यवादिता धरी रह जाएगी। और क्या रूपकुमारी में इतना नैतिक बल है कि वह अपने पति को हराम का माल हज़म करने से रोक दे? रोकना तो दूर की बात है, वह प्रसन्न होगी, शायद पतिदेव की पीठ ठोकेगी। अभी उनके दफ्तर से आने के समय वह मन मारे बैठी रहती है। तब वह द्वार पर खड़ी होकर उनकी बाट जोहेगी, और ज्योंही वह घर में आएँगे, उनकी जेबों की तलाशी लेगी।

आँगन में गाना-बजाना हो रहा था। रामदुलारी उमंग के साथ गा रही थी, और रूपकुमारी वहीं बरामदे में उदास बैठी हुई थी। न जाने क्यों उसके सिर में दर्द होने लगा था। कोई गाये, कोई नाचे, उससे प्रयोजन नहीं। वह तो अभागिन है। रोने के लिए पैदा की गयी है।

नौ बजे रात को मेहमान रुखसत होने लगे। रूपकुमारी भी उठी। एक्का मँगवाने जा रही थी कि रामदुलारी ने कहा-एक्का मँगवाकर क्या करोगी बहन, मुझे लेने के लिए कार आती होगी; चलो दो-चार दिन मेरे यहाँ रहो, फिर चली जाना। मैं जीजाजी को कहला भेजूँगी तुम्हारा इन्तजार न करें।

रूपकुमारी का यह अन्तिम अस्त्र भी बेकार हो गया। रामदुलारी के घर जाकर हालचाल की टोल लेने की इच्छा गायब हो गयी। वह अब अपने घर जाएगी और मुँह ढाँपकर पड़ी रहेगी। इन फटेहालों में क्यों किसी के घर जाए। बोली-नहीं, अभी तो मुझे फुरसत नहीं है, बच्चे घबरा रहे होंगे। फिर कभी आऊँगी।

‘क्या रात-भर भी न ठहरोगी?’

‘नहीं।’

‘अच्छा बताओ, कब आओगी? मैं सवारी भेज दूँगी।’

‘मैं खुद कहला भेजूँगी।’

‘तुम्हें याद न रहेगी। साल-भर हो गया, भूलकर भी याद न किया। मैं इसी इन्तजार में थी कि दीदी बुलावें तो चलूँ। एक ही शहर में रहते हैं, फिर भी इतनी दूर कि साल भर गुजर जाए और मुलाकात तक न हो।’

रूपकुमारी इसके सिवा और क्या कहे कि घर के कामों से छुट्टी नहीं मिलती। कई बार उसने इरादा किया कि दुलारी को बुलाये, मगर अवसर ही न मिला।

सहसा रामदुलारी के पति मि. गुरुसेवक ने आकर बड़ी साली को सलाम किया। बिलकुल अँगरेजी सज-धज, मुँह में चुरुट, कलाई पर सोने की घड़ी, आँखों पर सुनहरी ऐनक, जैसे कोई सिविलियन हो। चेहरे से जेहानत और शराफत बरस रही थी। वह इतना रूपवान् और सजीला है, रूपकुमारी को अनुमान न था। कपड़े जैसे उसकी देह पर खिल रहे थे।

आशीर्वाद देकर बोली-आज यहाँ न आती तो मुझसे मुलाकात क्यों होती!

गुरुसेवक हँसकर बोला-यह उलटी शिकायत! क्यों न हो। कभी आपने बुलाया और मैं न गया?

'मैं नहीं जानती थी कि तुम अपने को मेहमान समझते हो। वह भी तो तुम्हारा ही घर है।'

रामदुलारी देख रही थी कि मन में उससे ईष्र्या रखते हुए भी वह कितनी वाणी-मधुर, कितनी स्निग्ध, कितनी अनुग्रह-प्रार्थिनी होती जा रही है।

गुरुसेवक ने उदार मन से कहा-हाँ, अब मान गया भाभी साहब, बेशक मेरी गलती है। इस दृष्टि से मैंने विचार नहीं किया था। मगर आज तो मेरे घर रहिए।

'नहीं आज बिलकुल अवकाश नहीं है। फिर कभी आऊँगी। लड़के घबरा रहे होंगे।'

रामदुलारी बोली-मैं कितना कहके हार गयी, मानती ही नहीं।

दोनों बहनें कार की पिछली सीट पर बैठीं। गुरुसेवक ड्राइव करता हुआ चला। जरा देर में उसका मकान आ गया। रामदुलारी ने फिर बहन से उतरने के लिए आग्रह किया, पर वह न मानी। लड़के घबरा रहे होंगे। आखिर रामदुलारी उससे गले मिलकर अन्दर चली गयी। गुरुसेवक ने कार बढ़ायी। रूपकुमारी ने उड़ती हुई निगाह से रामदुलारी का मकान देखा और वह ठोस सत्य एक शलाका की भाँति उसके कलेजे में चुभ गया।

कुछ दूर जाकर गुरुसेवक बोला-भाभी, मैंने तो अपने लिए अच्छा रास्ता निकाल लिया। अगर दो-चार साल इसी तरह काम करता रहा तो आदमी बन जाऊँगा।

रूपकुमारी ने सहानुभूति के साथ कहा-रामदुलारी ने मुझसे बताया था। भगवान् करे, जहाँ रहो, खुश रहो। मगर जरा हाथ-पैर सँभाल के रहना।

'मैं मालिक की आँख बचाकर एक पैसा भी लेना पाप समझता हूँ, भाभी। दौलत का मजा तो तभी है कि ईमान सलामत रहे। ईमान खोकर पैसे मिले तो क्या! मैं ऐसी दौलत को त्याज्य समझता हूँ, और आँख किसकी बचाऊँ। सब सियाह-सुफेद तो मेरे हाथ में है। मालिक तो रहा नहीं, केवल उसकी बेवा है। उसने सब कुछ मेरे हाथ में छोड़ रखा है। मैंने उसका कारोबार सँभाल न लिया होता तो सब कुछ चौपट हो जाता। मेरे सामने तो मालिक सिर्फ तीन महीने जिन्दा रहे। मगर आदमी को परखना खूब जानते थे। मुझे १०० रुपये पर रखा और एक महीने में २०० रुपये कर दिया। आप लोगों की दुआ से पहले ही महीने में मैंने बारह हजार का काम किया।'

'क्या काम करना पड़ता है?' रूपकुमारी ने बिना किसी उद्देश्य के पूछा।

'वही मशीनों की एजेण्टी' तरह-तरह की मशीनें मँगाना और बेचना।-ठण्डा जवाब था।

रूपकुमारी का मनहूस घर आ गया। द्वार पर एक लालटेन टिमटिमा रही थी। उसके पति उमानाथ द्वार पर टहल रहे थे। मगर रूपकुमारी ने गुरुसेवक से उतरने के लिए आग्रह नहीं

किया। एक बार शिष्टाचार के नाते कहा जरूर पर जोर नहीं दिया, और उमानाथ तो गुरुसेवक से मुखातिब भी न हुए।

रूपकुमारी को वह घर अब कब्रिस्तान-सा लग रहा था, जैसे फूटा हुआ भाग्य हो। न कहीं फर्श, न फरनीचर, न गमले। दो-चार टूटी-टाटी तिपाइयाँ, एक लँगड़ी मेज, चार-पाँच पुरानी-पुरानी खाटें, यही उस घर की बिसात थी। आज सुबह तक रूपकुमारी इसी घर में खुश थी। लेकिन अब यह घर उसे काटे खा रहा है। लड़के अम्माँ-अम्माँ करके दौड़े, मगर उसने दोनों को झिडक़ दिया। उसके सिर में दर्द है, वह किसी से न बोलेगी, कोई उसे न छेड़े। अभी घर में खाना नहीं पका। पकाता कौन? लडक़ों ने तो दूध पी लिया है, किन्तु उमानाथ ने कुछ नहीं खाया। इसी इन्तजार में थे कि रूपकुमारी आये तो पकाये। पर रूपकुमारी के सिर में दर्द है। मजबूर होकर बाजार से पूरियाँ लानी पड़ेंगी।

रूपकुमारी ने तिरस्कार के स्वर में कहा-तुम अब तक मेरा इन्तजार क्यों करते रहे? मैंने तो खाना पकाने की नौकरी नहीं लिखायी है, और जो रात को वहीं रह जाती? आखिर तुम कोई महराजिन क्यों नहीं रख लेते? क्या जिन्दगी भर मुझी को पीसते रहोगे?

उमानाथ ने उसकी तरफ आहत विस्मय की आँखों से देखा। उसके बिगडऩे का कोई कारण उनकी समझ में न आया। रूपकुमारी से उन्होंने हमेशा निरापद सहयोग पाया है, निरापद ही नहीं, सहानुभूतिपूर्ण भी। उन्होंने कई बार उससे महराजिन रख लेने का प्रस्ताव खुद किया था, पर उसने बराबर यही जवाब दिया कि आखिर में बैठे-बैठे क्या करूँगी? चार-पाँच रुपये का खर्च बढ़ाने से क्या फायदा? यह पैसे तो बच्चों के मक्खन में खर्च होते हैं।

और आज वह इतनी निर्ममता से उलाहना दे रही है, जैसे गुस्से में भरी हो।

अपनी सफाई देते हुए बोले-महराजिन रखने के लिए तो मैंने खुद तुमसे कई बार कहा।

‘तो लाकर रख क्यों न दिया? मैं उसे निकाल देती तो कहते!’

‘हाँ यह गलती हुई।’

‘तुमने कभी सच्चे दिल से नहीं कहा, रूपकुमारी ने और भी प्रचण्ड होकर कहा-तुमने केवल मेरा मन लेने के लिए कहा। मैं ऐसी भोली नहीं हूँ कि तुम्हारे मन का रहस्य न समझूँ। तुम्हारे दिल में कभी मेरे आराम का विचार आया ही नहीं। तुम तो खुश थे कि अच्छी लौंडी मिल गयी है। एक रोटी खाती है और चुपचाप पड़ी रहती है। महज खाने और कपड़े पर। यह भी जब घर की जरूरतों से बचे। पचहत्तर रुपल्लियाँ लाकर मेरे हाथ पर रख देते हो और सारी दुनिया का खर्च। मेरा दिल ही जानता है, मुझे कितनी कतर-व्योंत करनी पड़ती है। क्या पहनूँ और क्या ओढ़ूँ! तुम्हारे साथ जिन्दगी खराब हो गयी! संसार में ऐसे मर्द भी हैं, जो स्त्री के लिए आसमान के तारे तोड़ लाते हैं। गुरुसेवक ही को देखो, दूर क्यों जाओ।

तुमसे कम पढ़ा है, उम्र में तुमसे कहीं कम है, मगर पाँच सौ का महीना लाता है, और रामदुलारी रानी बनी बैठी रहती है। तुम्हारे लिए यही ७५ रुपये बहुत हैं। राँड़ माँड़ में ही मगन! तुम नाहक मर्द हुए, तुम्हें तो औरत होना चाहिए था। औरतों के दिल में कैसे-कैसे अरमान होते हैं। मगर मैं तो तुम्हारे लिए घर की मुर्गी का बासी साग हूँ। तुम्हें तो कोई तकलीफ होती नहीं। तुम्हें तो कपड़े भी अच्छे चाहिए, खाना भी अच्छा चाहिए, क्योंकि पुरुष हो, बाहर से कमाकर लाते हो। मैं चाहे जैसे रहूँ तुम्हारी बला से।'

वाग्बाणों का यह सिलसिला कई मिनट तक जारी रहा, और उमानाथ चुपचाप सुनते रहे। अपनी जान में उन्होंने रूपकुमारी को शिकायत का कभी मौका नहीं दिया। उनका वेतन कम है, यह सत्य है, पर यह उनके बस की बात तो नहीं। वह दिल लगाकर अपना काम करते हैं, अफसरों को खुश रखने की सदैव चेष्टा करते हैं इसी साल बड़े बाबू के छोटे सुपुत्र को छः महीने तक बिना नागा पढ़ाया, इसीलिए तो कि वह प्रसन्न रहें। अब वह और क्या करें। रूपकुमारी की खफ़गी का रहस्य वह समझ गये। अगर गुरुसेवक वास्तव में पाँच सौ रुपये लाता है तो बेशक वह भाग्य का बली है। लेकिन दूसरों की ऊँची पेशानी देखकर अपना माथा तो नहीं फोड़ा जाता। किसी संयोग से उसे यह अवसर मिल गया। मगर हर एक को तो ऐसे अवसर नहीं मिलते। वह इसका पता लगाएँगे कि सचमुच उसे पाँच सौ ही मिलते हैं, या महज डींग है। और मान लिया कि पाँच सौ मिलते हैं, तो क्या इससे रूपकुमारी को यह हक है कि वह उनको ताने दे, और उन्हें जली-कटी सुनाये। अगर इसी तरह वह भी रूपकुमारी से ज्यादा रूपवती और सुशीला रमणी को देखकर रूपकुमारी को कोसना शुरू करें तो कैसा हो! रूपकुमारी सुन्दरी है, मृदुभाषिणी है, त्यागमयी है लेकिन उससे बढ़कर सुन्दरी, मृदुभाषिणी त्यागमयी देवियों से दुनिया खाली नहीं है। तो क्या इस कारण वह रूपकुमारी का अनादर करें?

एक समय था, जब उनकी नजरों में रूपकुमारी से ज्यादा रूपवती रमणी संसार में न थी; लेकिन वह उन्माद कब का शान्त हो गया। भावुकता के संसार से वास्तविक जीवन में आये उन्हें एक युग बीत गया। अब तो विवाहित जीवन का उन्हें काफी अनुभव हो गया है। एक को दूसरे के गुण-दोष मालूम हो गये हैं। अब तो सन्तोष ही में उनका जीवन सुखी रह सकता है। मगर रूपकुमारी समझदार होकर भी इतनी मोटी-सी बात नहीं समझती!

फिर भी उन्हें रूपकुमारी से सहानुभूति ही हुई। वह उदार प्रकृति के आदमी थे और कल्पनाशील भी। उसकी कटु बातों का कुछ जवाब न दिया। शर्बत की तरह पी गये। अपनी बहन के ठाठ देखकर एक क्षण के लिए रूपकुमारी के मन में ऐसे निराशाजनक, अन्यायपूर्ण, दुःखद भावों का उठना बिलकुल स्वाभाविक है। रूपकुमारी कोई संन्यासिनी नहीं, विरागिनी नहीं कि हर एक दशा में अविचलित रहे।

इस तरह अपने मन को समझाकर उमानाथ ने गुरुसेवक के विषय में तहकीकात करने का संकल्प किया।

२

एक सप्ताह तक रूपकुमारी मानसिक अशान्ति की दशा में रही। बात-बात पर झुंझलाती, लडक़ों को डाँटती; पति को कोसती, अपने नसीबों को रोती। घर का काम तो करना ही पड़ता था, लेकिन अब इस काम में उसे आनन्द न आता था। बेगार-सी टालती थी। घर की जिन पुरानी-धुरानी चीजों से उसका आत्मीय सम्बन्ध-सा हो गया था, जिनकी सफाई और सजावट में वह व्यस्त रहा करती थी, उनकी तरफ अब आँख उठाकर भी न देखती। घर में एक ही खिदमतगार था। उसने जब देखा, बहूजी घर की तरफ से खुद ही लापरवाह हैं तो उसे क्या गरज थी कि सफाई करता। जो चीज जहाँ पड़ी थी, वहीं पड़ी रहती। कौन उठाकर ठिकाने से रखे। बच्चे माँ से बोलते डरते थे, और उमानाथ तो उसके साये से भागते थे। जो कुछ सामने थाली में आ जाता उसे पेट में डाल लेते और दफ्तर चले जाते। दफ्तर से लौटकर दोनों बच्चों को साथ ले लेते और कहीं घूमने निकल जाते। रूपकुमारी से कुछ कहना बारूद में दियासलाई लगाना था। हाँ, उनकी यह तहक़ीकात जारी थी।

एक दिन उमानाथ दफ्तर से लौटे तो उनके साथ गुरुसेवक भी थे। रूपकुमारी ने आज कई दिनों के बाद परिस्थिति से सहयोग कर लिया था और इस वक्त झाडऩ लिए कुरसियाँ और तिपाइयाँ साफ कर रही थी, कि गुरुसेवक ने अन्दर पहुँचकर सलाम किया। रूपकुमारी दिल में कट गयी। उमानाथ पर ऐसा क्रोध आया कि उसका मुँह नोच ले। इन्हें लाकर यहाँ क्यों खड़ा कर दिया? न कहना, न सुनना, बस बुला लाये। उसे इस दशा में देखकर गुरुसेवक दिल में क्या कहता होगा। मगर इन्हें अक्ल आयी ही कब थी। वह अपना परदा ढाँकती फिरती है और आप उसे खोलते फिरते हैं। जरा भी लज्जा नहीं। जैसे बेहयाई का बाना पहन लिया है। बरबस उसका अपमान करते हैं। न जाने उसने उनका क्या बिगाड़ा है?

आशीर्वाद देकर कुशल-समाचार पूछा और कुरसी रख दी। गुरुसेवक ने बैठते हुए कहा-आज भाई साहब ने मेरी दावत की है, मैं उनकी दावत पर तो न आता; लेकिन जब उन्होंने कहा, तुम्हारी भाभी का कड़ा तकाजा है, तब मुझे समय निकालना पड़ा था।

रूपकुमारी ने बात बनायी। घर का कलह छिपाना पड़ा-तुमसे उस दिन कुछ बातचीत न हो पायी। जी लगा हुआ था।

गुरुसेवक ने कमरे के चारों तरफ नजर दौड़ाकर कहा-इस पिंजड़े में तो आप लोगों को बड़ी तकलीफ होती होगी?

रूपकुमारी को ज्ञात हुआ, यह युवक कितना सुरुचिहीन, कितना अरसिक है। दूसरों के मनोभावों का आदर करना जैसे जानता ही नहीं। इसे इतनी-सी बात भी नहीं मालूम कि दुनिया में सभी भाग्यशाली नहीं होते। लाखों में एक ही कहीं भाग्यवान् निकलता है। और

उसे भाग्यवान् ही क्यों कहा जाए? जहाँ बहुतों को दाना न मयस्सर हो, वहाँ थोड़े से आदमियों के भोग-विलास में कौन-सा सौभाग्य! जहाँ बहुत-से आदमी भूखों मर रहे हों, वहाँ दो-चार आदमी मोहनभोग उड़ायें तो यह उनकी बेहयाई और हृदयहीनता है, सौभाग्य कभी नहीं।

कुछ चिढक़र बोली-पिंजड़े में कठघरे में रहने से अच्छा है। पिंजड़े में निरीह पक्षी रहते हैं, कठघरा तो घातक जन्तुओं का ही निवास स्थान है।

गुरुसेवक शायद यह संकेत न समझ सका, बोला-मेरा तो इस घर में दम घुट जाए। मैं आपके लिए अपने घर के पास ही एक मकान ठीक करा दूँगा। खूब लम्बा-चौड़ा। आपसे कुछ किराया न लिया जाएगा। मकान हमारी मालकिन का है। मैं भी उसी के एक मकान में रहता हूँ। सैकड़ों मकान हैं उनके पास, सैकड़ों। सब मेरे अख्तियार में है। जिसे जो मकान चाहूँ, दे दूँ। मेरे अख्तियार में है। किराया लूँ या न लूँ। मैं आपके लिए सबसे अच्छा मकान ठीक करूँगा। मैं आपका बहुत अदब करता हूँ।

रूपकुमारी समझ गयी, महाशय इस वक्त नशे में हैं। अभी यों बहक रहे हैं। अब उसने गौर से देखा तो उनकी आँखें सिकुड़ गयी थीं, गाल कुछ फूल गये थे। जबान भी लडख़ड़ाने लगी थी। एक जवान, खूबसूरत शरीफ चेहरा कुछ ऐसा शेखीबाज और निर्लज्ज हो गया कि उसे देखकर घृणा होती थी।

उसने एक क्षण बाद फिर बहकना शुरू किया-मैं आपका बहुत अदब करता हूँ, जी हाँ! आप मेरी बड़ी भाभी हैं। आपके लिए मेरी जान हाजिर है। आपके लिए एक मकान नहीं, सौ मकान तैयार हैं। मैं मिसेज लोहिया का मुख्तार हूँ। सब कुछ मेरे हाथ में है। सब कुछ, मैं जो कुछ कहता हूँ, वह आँखें बन्द करके मंजूर कर लेती हैं। मुझे अपना बेटा समझती हैं। मैं उसकी सारी जायदाद का मालिक हूँ। (मि० लोहिया ने मुझे २० रुपये पर रखा, २० रुपये पर। वह बड़ा मालदार था। मगर किसी को नहीं मालूम; उसकी दौलत कहाँ से आती थी किसी को नहीं मालूम। मेरे सिवा कोई नहीं जानता। वह खुफियाफरोश था। किसी से कहना नहीं। वह चोरी से कोकीन बेचता था। लाखों की आमदनी थी उसकी। अब वही व्यापार मैं करता हूँ। हर शहर में हमारे खुफिया एजेण्ट हैं। मि० लोहिया ने मुझे इस फन में उस्ताद बना दिया। जी हाँ! मजाल नहीं कि मुझे कोई गिरफ्तार कर ले, बड़े-बड़े अफसरों से मेरा याराना है। उनके मुँह में नोटों के पुलिन्दे ठूँस-ठूँसकर उनकी आवाज बन्द कर देता हूँ। कोई चूँ नहीं कर सकता। दिन-दहाड़े बेचता हूँ। हिसाब में लिखता हूँ, एक हजार रिश्वत दी। देता हूँ, पाँच सौ। बाकी यारों का है। बेदरेग़ रुपये आते हैं और बेदरेग़ खर्च करता हूँ। बुढिय़ा को तो राम नाम से मतलब है। सत्तर चूहे खाके अब हज करने चली है। कोई मेरा हाथ पकडऩे वाला नहीं, कोई बोलने वाला नहीं, (जेब से नोटों का एक बण्डल निकालकर) यह आपके चरणों की भेंट है। मुझे दुआ दीजिए कि इसी शान से जिन्दगी कट जाय जो आत्मा और सदाचार के उपासक हैं उन्हें कुबेर लातें मारता है। लक्ष्मी उनको पकड़ती है, जो उसके लिए अपना दीन और ईमान सब कुछ छोडऩे को तैयार हैं। मुझे बुरा न कहिए। मैं कौन

मालदार हूँ? जितने धनी हैं, वे सब-के-सब लुटेरे हैं, पक्के लुटेरे, डाकू। कल मेरे पास रुपये हो जाएँ और मैं एक धर्मशाला बनवा दूँ। फिर देखिए मेरी कितनी वाह-वाह होती है। कौन पूछता है, मुझे दौलत कहाँ से मिली। जिस महात्मा को कहिए, बुलाकर उससे प्रशंसा करवा लूँ। मि० लोहिया को महात्माओं ने धर्म भूषण की उपाधि दी थी, इन स्वार्थी, पेट के बन्दरों ने। उस बुड्ढे को जिससे बड़ा कुकर्मी संसार में न होगा। यहाँ तो लूट है। एक वकील आध घण्टा बहस करके पाँच सौ मार लेता है, एक डाक्टर जरा-सा नश्तर लगाकर एक हजार सीधा कर लेता है, एक जुआरी स्पेकुलेशन में एक-एक दिन में लाखों का वारा-न्यारा करता है। अगर उनकी आमदनी जायज है तो मेरी आमदनी भी जायज है। जी हाँ, जायज है, मेरी निगाह में बड़े-से-बड़े मालदार की भी कोई इज्जत नहीं। मैं जानता हूँ, वह कितना बड़ा हथकण्डेबाज है। यहाँ जो आदमी आँखों में धूल झोंक सके, वही सफल है! गरीबों को लूटकर मालदार हो जाना समाज की पुरानी परिपाटी है। मैं भी वही करता हूँ, जो दूसरे करते हैं। जीवन का उद्देश्य है ऐसा करना। खूब लूटूँगा, खूब ऐश करूँगा और बुढ़ापे में खूब खैरात करूँगा। और एक दिन लीडर बन जाऊँगा। कहिए गिना दूँ। यहाँ कितने लोग जुआ खेल-खालकर करोड़पति हो गये, कितने औरतों का बाजार लगाकर करोड़पति हो गये ...।

सहसा उमानाथ ने आकर कहा-मि० गुरुसेवक, क्या कर रहे हो? चलो चाय पी लो। ठण्डी हो रही है।

गुरुसेवक ऐसा हड़बड़ा उठा, मानो अपने सचेत रहने का प्रमाण देना चाहता हो। मगर पाँव लडख़ड़ाये और जमीन पर गिर पड़ा। फिर सँभलकर उठा और झूमता-झूमता, ठोकरें खाता, बाहर चला गया। रूपकुमारी ने आजादी की साँस ली। यहाँ बैठे-बैठे उसे हौलदिल-सा हो रहा था। कमरे की हवा जैसे कुछ भारी हो गयी थी। जो प्रेरणाएँ कई दिन से अच्छे-अच्छे मनोहर रूप भरकर उसके मन में आ रही थीं, आज उसे उनका असली वीभत्स, घिनावना रूप नजर आया। जिस त्याग, सादगी और साधुता के वातावरण में अब तक उसकी जिन्दगी गुजरी थी, उसमें इस तरह के दाँव-पेंच, छल-कपट और पतित स्वार्थ का घुसना बिलकुल ऐसा ही था, जैसे किसी बाग में साँड़ों का एक झुण्ड घुस आये। इन दामों वह दुनिया की सारी दौलत और सारा ऐश खरीदने को भी तैयार न हो सकती थी। नहीं, अब रामदुलारी के भाग्य से अपने भाग्य का बदला न करेगी। वह अपने हाल में खुश है। रामदुलारी पर उसे दया आयी, जो भोग-विलास की धुन और अमीर कहलाने के मोह में अपनी आत्मा का सर्वनाश कर रही है। मगर वह बेचारी भी क्या करे? और गुरुसेवक का भी क्या दोष है। जिस समाज में दौलत पुजती है, जहाँ मनुष्य का मोल उसके बैंक-एकाउण्ट और टीम-टाम से आँका जाता है, जहाँ पग-पग पर प्रलोभनों का जाल बिछा हुआ है और समाज की कुव्यवस्था आदमी में ईष्र्या, द्वेष, अपहरण और नीचता के भावों को उकसाती और उभारती रहती है, गुरुसेवक और रामदुलारी उस जाल में फँस जाएँ, उस प्रवाह में बह जाएँ तो कोई अचरज नहीं।

उसी वक्त उमानाथ ने आकर कहा-गुरुसेवक यहाँ बैठा-बैठा क्या बहक रहा था? मैंने तो उसे

विदा कर दिया। जी डरता था, कहीं पुलिस उसके पीछे न लगी हो, नहीं तो मैं भी गेहूँ के साथ घुन की तरह पिस जाऊँ।

रामकुमारी ने क्षमा-प्रार्थी नेत्रों से उन्हें देखकर जवाब दिया-वही अपनी खुफ़ियाफ़रोशी की डींग मार रहा था।

'मुझे भी मिसेज लोहिया से मिलने को कह गया।'

'जी नहीं, आप अपनी क्लर्की किये जाइए। इसी में हमारा कल्याण है।'

'मगर क्लर्की में वह ऐश कहाँ? क्यों न साल-भर की छुट्टी लेकर जरा उस दुनिया की भी सैर करूँ!'

'मुझे अब उस ऐश का मोह नहीं रहा।'

'दिल से कहती हो?'

'सच्चे दिल से।'

उमानाथ एक मिनट तक चुप रहने के बाद फिर बोले-मैं आकर तुमसे यह वृत्तान्त कहता तो तुम्हें विश्वास आता या नहीं, सच कहना?

'कभी नहीं, मैं तो कल्पना ही नहीं कर सकती कि अपने स्वार्थ के लिए कोई आदमी दुनिया को विष खिला सकता है!'

'मुझे सारा हाल पुलिस के सब इन्सपेक्टर से मालूम हो गया था। मैंने उसे खूब शराब पिला दी थी कि नशे में बहकेगा जरूर और सब कुछ उगल देगा।'

'ललचता तो तुम्हारा जी भी था।'

'हाँ ललचता तो था, और अब भी ललच रहा है। मगर ऐश करने के लिए जिस हुनर की जरूरत है, वह कहाँ से लाऊँगा?'

'ईश्वर न करे, वह हुनर तुममें आये। मुझे तो उस बेचारे पर तरस आती है। मालूम नहीं खैरियत से घर पहुँच गया या नहीं!'

'उसकी कार थी। कोई चिन्ता नहीं।'

रूपकुमारी एक क्षण जमीन की तरफ ताकती रही। फिर बोली-तुम मुझे दुलारी के घर

पहुँचा दो। अभी शायद मैं उसकी कुछ मदद कर सकूँ। जिस बाग की वह सैर कर रही है उसके चारों ओर निशाचर घात लगाये बैठे हैं। शायद मैं उसे बचा सकूँ।

उमानाथ ने देखा, उसकी छवि कितनी दया-पुलकित हो उठी है।

लेखक परिचय

प्रेमचन्द का जन्म ३१ जुलाई सन् १८८० को बनारस शहर से चार मील दूर समही गाँव में हुआ था। आपके पिता का नाम अजायब राय था। वह डाकखाने में मामूली नौकर के तौर पर काम करते थे। आपके पिता ने केवल १५ साल की आयू में आपका विवाह करा दिया। विवाह के एक साल बाद ही पिताजी का देहान्त हो गया। अपनी गरीबी से लड़ते हुए प्रेमचन्द ने अपनी पढ़ाई मैट्रिक तक पहुंचाई। जीवन के आरंभ में आप अपने गाँव से दूर बनारस पढ़ने के लिए नंगे पाँव जाया करते थे। तेरह वर्ष की उम्र में से ही प्रेमचन्द ने लिखना आरंभ कर दिया था। शुरु में आपने कुछ नाटक लिखे फिर बाद में उर्दू में उपन्यास लिखना आरंभ किया। इस तरह आपका साहित्यिक सफर शुरु हुआ जो मरते दम तक साथ - साथ रहा। सन् १९३६ ई० में प्रेमचन्द बीमार रहने लगे। अपने इस बीमार काल में ही आपने "प्रगतिशील लेखक संघ" की स्थापना में सहयोग दिया। आर्थिक कष्टों तथा इलाज ठीक से न कराये जाने के कारण ८ अक्टूबर १९३६ में आपका देहान्त हो गया। और इस तरह वह दीप सदा के लिए बुझ गया जिसने अपनी जीवन की बत्ती को कण-कण जलाकर भारतीयों का पथ आलोकित किया।

Two Sister

Copyright © 2013 by Sai ePublications

Digital edition produced & published by
Sai ePublications